Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 SISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

कालिदास का जीव-जन्तुगत प्रेम एवं पर्यावरण की स्वच्छता

डॉ० अवधेश कुमार
(प्रभारी प्रधानाध्यापक)
+ 2 उच्च विद्यालय, महसौरा
लखीसराय, बिहार, भारत

सारांश- कालिदास ने मानव के कल्याण के लिए मानवेतर प्राणियों अर्थात विभिन्न स्थलीय जीव–जंतु एवं आकाशीय पक्षियों को संरक्षण देने हेतु हमें प्रेरित किया है। सभी जीव जंतु परस्पर एक आहार श्रृंखला से जुड़े हुए हैं। अत: इसका संरक्षण पर्यावरण स्वच्छता के लिए परम आवश्यक है। तभी पर्यावरण को दूषित होने से बचाया जा सकता है।

प्रमुख शब्द- जलवायु, हिंसकपशु, परिस्थितीकी, अध्यात्मिकपरम्परा, क्रोन्च, नीलगाय, चातक, मानसरोवर,हंस, नन्दिनी, प्राणवायु, कम्भोदर।

जीवजन्तुओं से पर्यावरण का संरक्षण- जिसप्रकार भारत भूमि से आदिम अरण्य प्राय: तिरोहित हो गये हैं, उसी प्रकार अधिकांश वन्यपशुएँ लगभग समाप्त प्राय हो रहे हैं। इसका कारण है कि किसी भी स्थान के जन्तुओं–पशुओं एवं वनस्पतियों में गहरे सम्बंध होते हैं। वनस्पति से जन्तुओं को न केवल भोजन मिलता है, अपितु सुरक्षित प्राकृतिक आवास भी मिलता है। यद्यपि जीव–जन्तु विभिन्न जगहों में घूमते रहते हैं, लेकिन जन्तुओं की प्रत्येक जाति जलवायु की दशाओं में सीमित परिवर्तनों को ही सहन कर सकती है। उनकी शारीरिक संरचना, रंग–रूप, भोजन की आदतें आदि सब कुछ उनके पर्यावरण के अनुकूल होता है। इस लिए पृथ्वी पर पाये जानेवाले जन्तुओं और पौधों की विभिन्न जातियों के अन्तर्सम्बन्धों को समझना चाहिए। चूँकि कृषि, वानिकी, व्यापारिक, पशु चारण, मछली–पालन तथा आखेट (शिकार) जैसे मानवीय क्रिया–कलापों की गलत योजनाओं के कारण यह संतुलन बिगड़ गया है। फलस्वरूप जन्तुओं की अनेक जातियाँ विनाश (लुप्त होने) के कगार पर खड़ी है।

कालिदास के समय में देश अरण्यों (जंगलों) से भरा हुआ था, जिनमें अनेकानेक जंगली पशु स्वच्छन्द विहार करते थे।[1] यही कारण है कि उनकी कृतियों में विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षियों का सुन्दर–चित्रण हुआ है, जिसे हम कवि की

पर्यावरण के प्रति गहरी सोच कह सकते हैं। ध्यातव्य है कि स्थलीय पशु, जलीय जीव एवं आकशीय पक्षी ये सभी पर्यावरण परिरक्षण में अत्यन्त सहयोगी होते हैं यही कारण है कि इन सबों के अस्तित्व की रक्षा के लिए पुरातन ऋषियों ने इन सबों का सम्बंध वाहन आदि के रूप में देवताओं के साथ स्थापित कर दिया। ताकि जन-सामान्य में इसकी रक्षा की भावना उत्पन्न हो सके।

उदाहरण स्वरूप गाय को प्रस्तुत किया जा सकता है। इससे उत्सर्जित पदार्थ दूध, दही, घी, गोवर, गोमूत्र आदि किसी न किसी रूप में पर्यावरण शोधन में काम आते हैं। धृत, यव आदि हव्य पदार्थों से प्राण-वायु (ऑक्सीजन) परिशुद्ध होती है। साथ ही इसके गोबर रासायनिक उर्वरकों के बदले में प्रयुक्त होते हैं। इससे स्पष्टत: दो लाभ दिखाई पड़ते है। पहला तो उर्वरकों के कम प्रयोग के कारण मृदा की उर्वरा शक्ति संरक्षित रहती है तथा दूसरा खाद्य फसल पोषण युक्त होते हैं जिसके भक्षण से मनुष्य स्वस्थ एवं नीरोग रह पाते हैं। असाध्य रोगों के उपचार में गोमूत्र का उपयोग तो सर्वविदित ही है। अत: गाय, घोड़ा, बन्दर, भेड़ आदि विभिन्न पशुओं से पर्यावरण शोधन सम्भव हो पाते हैं, जिनका संरक्षण जरूरी है।

इसी तरह से बाघ, साँप, चूहा, गिद्ध आदि प्राणियों की रक्षा होनी चाहिए। इन सबों से पर्यावरण प्रभावित होता है। बाघ जैसे हिंसक पशु की न्यूनता या शून्यता उत्पन्न होने से शाकाहारी प्राणियों की संख्या अत्यधिक हो जायेगी, जो वनस्पति आदि पौधों को (अधिकाधिक भक्षण कर) प्रभावित कर सकते है। विभिन्न प्रजाति वाले साँपों की कमी होने से चूहे आदि की संख्या बढ़ जायेगी, जो धन-धान्य, फसल आदि को छतिग्रस्त कर सकता है। किन्तु यदि चूहे का संरक्षण नहीं हो पाये तो उससे भी पर्यावरण प्रभावित होते हैं। चूहे से प्लेग जैसी बीमारियों की पूर्वसूचना प्राप्त होती है। आजकल गिद्ध मरे हुए जानवारों का भक्षण कर पर्यावरण प्रदूषण को आसानी से रोकने में समर्थ होता है। अतएव हम पाते हैं कि इन सभी पशु-पक्षियों का परिरक्षण परमावश्यक है, नहीं तो सम्पूर्ण विश्व के मानव एवं मानवेतर प्राणियों की आहार शृंखला अव्यवस्थित हो जायेगी। सम्पूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र इससे प्रभावित हो जायेगा और पर्यावरण पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

अत: समस्त पशु-पक्षियों, जीवों की देख-भाल उसका संरक्षण एवं सम्बर्द्धन के प्रति हमें सचेष्ट रहना चाहिए। इस हेतु विवेकशील मानव अपनी आध्यात्मिक परम्परा, अपनी पुरातन मनीषा को आदर्श के रूप में स्वीकार कर उक्त संदर्भ में गहन चिन्तन करें, जिससे पर्यावरण संतुलन कायम रहे। महाकवि कालिदास की सभी रचनाएँ एवं उनकी परिनिष्ठित भावनाएँ इसी तथ्य की ओर संकेत कर रही है।

कालिदास की कृतियों में वर्णित जीवजन्तु तथा पशु-पक्षी

महाकवि ने अपनी प्रथम कृति ऋतुसंहार के प्रथम सर्ग में प्रचण्ड गर्मी से व्याकुल सर्प और मोर का वर्णन किया है। **अवाङ्मुखो जिह्मगतः श्वसनमुहुः फणी मयूरस्य तले निषीदति।** [1] सभी जीव-जन्तु मित्र-शत्रु के भाव को भी भूल गये है, इसलिए तो गर्मी से पीड़ित सर्प मोर की छाया में आकर कुण्डली मारे बैठा है; तथा गर्मी से बेचैन मोर उसे कुछ नहीं कर रहा है। हाथियों के पास होने पर भी यह सिंह उन्हें मार नहीं रहा है। क्योंकि गर्मी इतनी पड़ रही है कि बहुत प्यास के मारे इसका सब साहस ठंडा हो गया है।

संस्कृत काव्यों में क्रौञ्च का वर्णन अत्यन्त विरल है। महाकवि कालिदास ने अपनी रचना ऋतुसंहार में अनेक बार क्रौञ्च का उल्लेख किया है। हेमन्त ऋतु के वर्णन में उन्होंने लिखा है – अनेक गुणों से रमणीय, अङ्गनाओं के चित्तों को हरनेवाला, परिपक्व धानों की ग्रामों के सीमाओं की शोभा बढ़ानेवाला, चारो ओर माला पड़ा, क्रौञ्च पक्षियों के गीतों से व्याप्त, बरफ-युक्त यह हेमन्तऋतु आप सबको सुख प्रदान करें –

विनिपततुषारः क्रौञ्चनादोपगीतः प्रदिशतु हिमयुक्तः कालः एषः सुखं वः।[2]

कुमारसम्भवम् के प्रथम सर्ग में हिमालय वर्णन के प्रसङ्ग में कवि ने सर्वप्रथम सिंहों का वर्णन किया है कि यहाँ के सिंह जब हाथियों को मारकर चले जाते है तो रक्त से लाल पंजो की छाप तो हिमधारा से धुल जाती है। पर उन सिहों के नखों से गिरी हुयी गजमुक्ताओं को देखकर ही वहाँ के किरात जान लेते है कि सिंह किधर से गये हैं।

पदं तुषारस्रुतिधौतरक्तं यस्मिन्नदृष्ट्वाऽपि हतद्विपानाम्।

विदन्ति मार्ग नखरन्ध्रमुक्तैर्मुक्ताफलैः केसरिणां किराताः।। – कुमार॰ 1-6

जिन हिरणियों की पूछों के चँवर बनाते है, वे हरिणियाँ जब यहाँ चन्द्रमा की किरणों के समान अपनी छोटी पूँछे इधर-उधर घूमाती चलती है, तब ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वे इस पर्वतराज पर पूँछ के चंवर डुलाकर इसका गिरिराज नाम पुकार रहे है।

शंकर की समाधिस्थल की चर्चा करते हुए कालिदास नन्दी एवं नीलगायों का उल्लेख करते हैं, कि उनका गर्वीला नन्दी गरजते हुए सिंह की दहाड़ को न सह सकने के कारण जब अपनी छरों से हिम की चट्टानों को खोदता हुआ डकारने लगता है तब घबड़ायी हुई नीलगायें उसे देखते ही रह जाती थी, कि यह सिंह जैसा गरजनेवाला दूसरा कौन वीर आ पहुँचा।

तुषारसङ्घातशिलाः खुराग्रैः समुल्लिखन्दर्पकलः ककुद्यान्।

दृष्टः कथञ्चिद् गवयै विविगैरसोढसिंह ध्वनिरुन्नाद।। – कुमार. 1.56

पूस की जिन रातों में वहाँ का सरसराता हुआ पवन चारों ओर हिम ही हिम बिखेरता चलता था, उन दिनों वह सारी रात जल में बैठी बीता देती और उनके सामने ही चकवे और चकवी का जोड़ा एक दूसरे से विछुड़ा हुआ चिल्लाया करता जिन्हें वह ढाढस बंधाया करती थी।

परस्पराक्रन्दिनि चक्रवाकयोः पुरो वियुक्ते मिथुने कृपावती'। – कुमार. 5–26

पार्वती के तप की परीक्षा लेते हुए ब्रह्मचारी वेशधारी शिव ने कहा कि सबसे बड़ी हँसी की बात तो यह है कि जब आप हाथी को छोड़कर उनके बूढ़े बैल पर चढ़कर अपने ससुराल को चलेगी और नगर के भले मनुष्य सब आपको देख–देखकर हँसी उड़ायेंगे।

विलोक्यवृद्धोक्षधिष्ठितंत्वया महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति। – कुमार. 5–70

शिव की बारात में अजीव तरह के वरयात्री थे। सप्तमातृकाओं के पीछे भद्रकाली जी आ रही थी, जो ऐसी लग रही थी मानो बगुलों से भरी हुई और दूर तक चमकने वाली बिजली युक्त काले बादलों की छटा उठ चली आ रही हो "बलाकिनी नीलपयोदराजी दूरं पुरः क्षिप्तशतहदेव"। (कुमार–7–39)। गंगा और – यमुना भी अपना नदी का रूप छोड़कर महादेव पर चँवर डुलाने लगी है। वे चँवर ऐसे लगते थे मानों हंस उड़ रहे हों –

'समुद्रगारूपविपर्ययेऽपि सहंस पाते इव लक्ष्यमाणे' – कुमार. 7–42

मेघदूत में पहले चातक का ही वर्णन किया गया है। मेघ की यात्रा आरम्भ करने के समय चातक मीठी बोली बोलकर शुभ शकुन कर रहा है। यक्ष कह रहा है कि तुम्हारा सुहावना रूप देखकर बगुलियाँ भी समझ लेगी कि हमारे गर्भाधान का समय आ गया है। इसलिए वे पक्तिबद्ध होकर अपने पँखों से तुम्हें पंखा झुलाने के लिए अवश्य ही आकाश में उड़कर तुम्हारे पास आ पहुँचेगी

"वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः"। – पूर्वमेघ–10

तुम्हारी गरज सुनकर मानसरोवर को जानेवाली हंस भी अपनी चोंचों में कमल की अगली डंठल लिए आकाश में तुम्हारे साथ–साथ उड़ने चले जायेंगे –

आ कैलासाद्विसकिसलयच्छेद पाथेयवन्तः

सम्पत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसाः सहायाः।। – पूर्व. 11

उत्तरमेध में अलकापुरी के वर्णन प्रसंग में यक्ष के माध्यम से कवि कहते है कि वहाँ पर सदा फूलने वाले ऐसे बहुत से वृक्ष मिलेंगे जिनपर मतवाले 'भौंरे' गुनगुनाते होंगे। वहाँ वारहमासी कमल और कमलिनियों को हंसों की पंक्ति घेरे रहती है। यहाँ पालतू मोरों का भी वर्णन आया है।

यत्रोन्मत्त भ्रमरमुखराः पादपा नित्य पुष्पा।

हंस श्रेणी रचित रशना नित्य पद्मा नलिन्यः।। – उत्तरमेध–3

अलकापुरी में साँवले धोड़ों और पहाड़ जैसे बडे–बड़े हाथियों का भी चित्रण कालिदास ने किया है।

पत्रश्यामा दिनकर हयस्पर्द्धिनो यत्र वाहा।

शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्।। – उत्तरमेघ – 13

यक्ष मेघ से कहता है कि मेरे वियोग में मेरी प्रिया अपनी साथी से बिछड़े हुई चकवी के समान लगेगी।

तां जानीथाः परिमित कथां जीवितं म द्वितीयं

दूरीभूते मयि सहचरे चक्रवाकीमिवैकाम्।। – उत्तरमेघ–23

प्रोषितपतिका के द्वारा मैना, सुग्गा से बोलने की परम्परा भी रही है। वही परम्परा मेधदूत में भी है। यक्षिणी मैना से पूछती है कि क्या तुम भी अपने पति को याद कर रही हो?

सारिका पञ्जरस्थां कञ्चिद्भर्तुः स्मरसि। – उत्तरमेघ–25

अन्त में यक्ष मेघ से कहता है कि तुम तो उपकार शब्द से नहीं अपितु कर्म से करते हो पपीहों को उत्तर तुम जल की बूंदों से देते हो। यक्ष अपनी प्रिया की सुन्दरता चकित हरिणी की तरह बताता है। इस तरह से मेधदूत में अनेकानेक जन्तुओं का वर्णन किया गया है।

रघुवंश महाकाव्य में कालिदास ने प्रथमतया मगरमच्छ का वर्णन किया है, जैसे मगरमच्छ के डर से समुद्र में प्रवेश करने से डरते है उसी तरह राजा दिलीप के पास आने से नौकर आदि भय खाते थे। क्योंकि वे न्यायप्रिय एवं कठोर कानून पालन करते थे –

भीम कान्तैर्नृप गुणैः स बभूवोपजीविनाम्। [4]

इसके बाद उन्होंने मोर का चित्रण किया है। राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा ने देखा की रथ की गडगडाहट सुनकर बहुत से मोर अपना मुह ऊपर उठाकर दूहरे मनोहर षड़ज शब्द सुना रहे थे।

षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्ना शिखण्डिभिः।[5]

दिलीप द्वारा पुत्र न होने के कारण पूँछने पर वशिष्ट ने कहा कि तुमने कामधेनु का अपमान किया है इसलिए उसने शाप दिया है कि जब तक तुम मेरी सन्तान की सेवा नहीं करोगे तब तक पुत्र नहीं होगा। इसलिए कामधेनु की पुत्री नन्दिनी की सेवा करो यदि वह प्रसन्न हो जायेगी तो इष्ट की प्राप्ति अवश्य होगी।

सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः।

आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुधा हि सा। – रघु. 1.81

यहाँ कवि ने पशुओं के प्रति मानव के द्वारा किये गये अपराध (अपमान) सहन नहीं किया है। स्पष्ट रूप से उन्होंने गौ का सम्मान एवं उसका रक्षण की बात कही है। क्योंकि इस गो से उत्सर्जित पदार्थ धृत आदि को यज्ञ में हवि के रूप में प्रयोग करते है जिससे प्राणवायु (ऑक्सीजन) शुद्ध होती है । कवि ने दिलीप के लिए गुरू वशिष्ट के माध्यम से प्रथम सर्ग में कहा है कि कामधेनू पाताल लोक में वरुण के यज्ञ में हवि जुटाने हेतु गयी हुई है। उस कामधेनु की सन्तान नन्दनी की सेवा करो– **हविषे दीर्घ सत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः।**[6]

जंगल में नन्दिनी के साथ जाते हुए राजा दिलीप ने देखा कि सूअरों के झुण्ड तालावों से निकल रहा है, मोर बसेरो की ओर उड़े जा रहे थे, और हरिण थककर हरी–भरी धासों पर जा बैठे थे

स पल्वलोत्तीर्ण वराह यूथान्यावासवृक्षोन्मुख बर्हिणानि।

ययौ भृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानिनि पश्यन्।। – रघु. 2.17

दिलीप की परीक्षा हेतु नन्दिनी गुफा में बैठ गयी। उसी समय एक सिंह ने नन्दिनी को दबोच लिया।

अलक्षिताभ्युत्पतनो नृपेण प्रसह्य सिंहः किल तां चकर्ष। – रघु. 2.27

सिंह ने दिलीप से अपनी उपस्थिति का कारण बताते हुए कहा कि शिव ने जंगली हाथियों को डराने के लिए मुझे यहाँ पहाड़ की इस कन्दरा में सिंह के रूप में रखवाला बनाकर बैठा दिया है और मेरा पेट भरने के लिए आज्ञा दे दी है कि यहाँ जो जीव आये उसे तुम मारकर खा लिया करो –

तदाप्रभृत्येव वनद्विचानां त्रासार्थमस्मिन्नहमद्रिकुक्षौ।

व्यापारितः शूलभृता विधाय सिंहत्वमङ्कागत सत्ववृत्तिः। – रघु. 2.38

इसके पश्चात् राजा दिलीप ने अपने अस्त्र को फेंककर नन्दिनी की रक्षा हेतु अपने शरीर को सिंह के समक्ष (खाने हेतु) सौंप दिया। यहाँ कवि की पशु रक्षायुक्त भावना दृष्टगत होती है। चकवा–चकवी का वर्णन करते हुए महाकवि कहते है कि राजा दिलीप तथा रानी सुदक्षिणा का प्रेम चकवा–चकवी की तरह था।

रथाङ्गनाम्नोरिव भावबन्धनं बभूव यत्प्रेम परस्पराश्रयम्।

विभक्तमप्येकसुतेन तत्तयोर्परस्परस्योपरि पर्यचीयत ।। – रघु. 3.24

गाय के वर्णन में महाकवि कहते हैं– जैसे गाय का बछड़ा बड़ा होकर साँड हो जाता है तथा हाथी का बच्चा बड़ा होकर गजराज हो जाता है उसी प्रकार गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने पर रधु का शरीर और भी खिल उठा।

महोक्षता वत्सतरः स्पृशन्निव द्विपेन्द्रभावं कलभः श्रयन्निव।

रघुः क्रमाद्यौवनभिन्नशैशवः पुपोष गम्भीर्यमनोहरं वपुः।। – रघु. 3.32

मालविकाग्निमित्रम् नाटक में वर्णित राजा अग्निमित्र की सभा में दो नाट्याचार्य थे, गणदास एवं हददत्त। दोनों में परस्पर विद्वता की बात उठती है: समाध न हेतु दोनों में शास्त्रार्थ का निश्चय हुआ, दोनों को महाकवि कालिदास ने लड़ाक हाथियों से उपमित किया है –

अन्योन्य कलहप्रिययोर्मत्तहस्तिनोरेकतरस्मिन्नजिर्जिते कुत उपशमः?[7]

मालविका को देखकर राजा उस पर मुग्ध हो गये है, परन्तु रानी धारिणी के भय स भयभीत भी है। ऐसे में राजा की उपमा कवि ने उस गिद्ध से दी है जो कसाई के घर पर मडराता है – **सूनापरिसरचर इव गृध्र आमिषलोलुपोभिरुकश्च।**[8] माँस के लिए कुत्ते का भी भय उसे लगा रहता है। आम के पल्लव को ढूँढने चली निपुणिका को चीटियों ने काट

लिया। **"चूताङ्कुरं विचिन्वत्योः पिपीलिकाभिर्दष्टम्**। इरावती कहती है कि जैसे व्याधो के गीत सुनकर हरिणी सब सुध-बुध खोकर जाल में फस जाती है वैसे ही मैं भी इनकी बातों पर विश्वास कर बैठी - **"व्याघजनगीतगृहीतचित्तयेव हरिण्यैतन्न विज्ञातं मया ।।**[9]

विक्रमोर्वशीयम् में कालिदास ने सर्वप्रथम भौरों एवं कोयलों का वर्णन किया है। 'क्या यह फूलों के रसवाण से मदमत भौरों की गुजाधार है है? अथवा यह कोयल की नशीली कूक तो नहीं?

मत्तानां कुसुमरसेन षट्पदानां शब्दोऽयं परभृतनाद एष धीरः।

आकाशे सुरगणसेविते समन्तात् किं नार्यः कलमधुराक्षरं प्रगीताः।।

- विक्रमो 1.3

उर्वशी को राक्षसों से छुड़ाने के लिए प्रस्थान पुरूरवा का रथ इतने वेग से दौड़ रहा है कि घोड़ों के सिर की चौरियाँ ऐसी खड़ी हो गयी कि मानो चित्र में बनायी गयी हो -

अग्रे यान्ति रथस्य रेणुपदवीं चूर्णीभवन्तो घना

श्चक्रभ्रान्तिररान्तरेषु वितनोत्यन्यामिवारावलीम्। - विक्रमो 1-5

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में सर्वप्रथम भौरों और हरिण का वर्णन हुआ है। हरिण का पीछा करता हुआ दुष्यन्त कण्व के आश्रम में प्रवेश करता है।

तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसभं हृतः।

एष राजेव दुष्यन्तः सारङ्गेणातिरंहसा।। (अभि. 1-5)

वह हरिण इतना तेज दौड़ रहा था कि रथ के घोड़े भी पीछे छूट गये थे -

यदालोके सूक्ष्म व्रजति सहसा तद्विपुलतां

यदर्धे विच्छिन्न भवति कृतसन्धानमिव तत्।

प्रकृतया यद्वक्रं तदपि समरेरव नयनयोर्न

मे दूरे किञ्चित्क्षणमपि न पाश्वे रथजवात्।।

- अभि. 1-9

हिरण का पीछा करते हुए राजा जब ऋषि-आश्रम तक पहुँच जाते हैं तब उस समय बैखानस की यह उक्ति उल्लेखनीय है (हस्तमुदयम्य) राजन! आश्रम मृगोऽयं न हन्तव्यम्। अर्थात् हाथ उठकार वैखानस कहता है कि हे राजन ! आश्रम का यह मृग मारने योग्य नहीं है इसलिए इन्हें नहीं मारना चाहिए।[10] यहाँ कवि ने तपस्वी के माध्यम से दुष्यन्त को बतलाया है कि वीर क्षत्रियों का शस्त्र तो पीड़ितों की रक्षा करने के लिए प्रयुक्त होता है न कि निरपराध मृगों पर प्रहार करने के लिए।

आर्तत्राणाय वः वस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि''– अभि. 1.11

यहाँ कवि ने प्रकारान्तर से पशुओं की हिंसा का घोर विरोध जताया है। उन्हें पशु हत्या पर पूर्ण आपत्ति है। राजा के डर के मारे हाथी आदि वन्यजीव भागकर आश्रम में आ गये थे। कवि ने कमलिनी कोटिक नायिका शकुन्तला के मुख के चोरों ओर मॅडराते हुए भौरों का वर्णन किया है।

शकुन्तला की विदाई के समय कोयल भी जाने की अनुमति देता है

अनुमतगमना शकुन्तला तरुभिरियं बनवासबन्धुभिः।

परभृतविरुतं कलं यथा प्रतिवचनीकृतमेभिरीदृशम्।। – अभि. 4.10

मल्लाह को पकड़कर राजपुरुष कहता है कि अब तो तुम गिद्धों का भोजन बनेगा या कुत्तों से नोंचा जाएगा। **(गृध्रबलिर्भविष्यसि, शुनो मुखं वा द्रक्ष्यसि)** राजा जब सभी स्त्रियों को अपने पास से हटा देता है तब विदूषक कहता है कि अच्छा किया सब मक्खियों को आपने उड़ा दी। दुष्यन्त के द्वारा प्रदत्त अंगूठी नदी की धारा में गिर गयी थी, जिसे रोहू मछली ने निगल लिया था। **(रोहितमत्स्यस्योदराभ्यन्तर आसीत्)।**[11] शकुन्तला के वियोग में दुःखी दुष्यन्त को क्रोधित करने के लिए इन्द्र का सारथि मातलि विदूषक को उठाकर ले जाता है तब विदूषक चिल्लाता है कि मैं तो बिल्ली के द्वारा पकड़े गये चूहे की तरह हूँ **(विडालगृहीतो मूषक इव निराशोऽस्मि जीविते संवृतः)**[12]

अतः महाकवि कालिदास की रचनाओं के सम्यक् अध्ययन से ज्ञात होता है कि कवि को विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं से अगाध प्रेम था। उन सब जीवों के प्रति उनकी आस्था बिल्कुल स्वाभाविक एवं सौहार्दपूर्ण थी। जीव-जन्तु, पशु-पक्षी आदि मानवेतर प्राणियों का संरक्षण एवं सम्बर्द्धन उनका मूल ध्येय था कवि ने अपने पात्र, चरित्र, कथावस्तु, कथोपकथन आदि के व्याज से किसी न किसी रूप में पर्यावरण स्वच्छता की बात ध्वनित की है, जो सर्वथा परवर्ती अध्येताओं के लिए अवलोकनीय एवं अनुसंधेय है। इससे जनमानस में पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्रवृत्ति बढ़ेगी।

इस अध्याय में विवेचन के क्रम में हम देखते हैं कि कालिदास प्रकृति के प्रति अपना प्रेम अभिव्यक्त करने के साथ प्रकृतिगत विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षियों, जो उनके समय में उपलब्ध थे के वर्णन में भी काफी रूचि लेते हैं। भूचर एवं जलचर, पशुओं के अनेक जातियों का उल्लेख यहाँ हम पाते हैं। जन-सामान्य की दृष्टि में आनेवाले ये पशु दो प्रकार के होते हैं – हिंसक और अहिंसक। हिंसक पशुओं में वे पशु आते हैं, जो अपने आहार के लिए दूसरे जीवों को मार डालते हैं। वे अपना आहार स्वतः अर्जित नहीं कर पाते और वे मांसाहारी होते है, दूसरे जीवों से रक्त एवं मांस का भक्षण कर अपनी क्षुधा तृप्ति करते हैं। इनके अन्तर्गत सिंह, चीता भेड़िया आदि आते हैं।

सुकुमार प्रकृति के उपासक महा कवि कालिदास इन पशुओं का वर्णन तो अपने काव्य में करते ही है किन्तु इन्हें दूसरे प्राणियों की हिंसा करते नहीं देखते है। रघुवंश के दूसरे सर्ग में 'कुम्भोदर' नामक सिंह को गाय पर आक्रमण करते हुए दिखाया जाता है, किन्तु वह सिंह गाय को मारता नहीं और राजा दिलीप द्वारा अपना निहत्था शरीर अर्पित किये जाने पर भी उसका भक्षण नहीं करता। क्योंकि वास्तव में वह सिंह था ही नहीं। राजा की भक्ति की परीक्षा के लिए खुद नन्दिनी ने ही माया सिंह को उपस्थापित किया था। इसलिए उसके हिंसक होने की बात ही नहीं थी। इसी तरह अभिज्ञानशाकुन्तल के अन्तिम दृश्य में सर्वदमन सिंह के बच्चे के साथ खेलता हुआ मंच पर उपस्थित होता है, जो सिंह शावक उसे किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचाता है। इस प्रकार कालिदास के काव्यों में जो हिंसक पशु वर्णित हैं वे अहिंसक रूप में ही दृष्टिगत होते हैं। इतना ही नहीं कालिदास कालीन राजा के लिए वन्य पशुओं का शिकार करना उसकी (राजा की) शान समझा जाता था। इसलिए अभिज्ञानशाकुन्तल में राजा दुष्यत का वर्णन शिकारी के रूप में किया जाता है, किन्तु वे शिकार में रूचि नहीं लेते और सेनापति के द्वारा बार-बार शिकार के लिए प्रेरित किये जाने पर तथा शिकार के अनेक गुण बताये जाने पर भी उस जंगल के पशु-पक्षियों के प्रति अपने स्नेह की अनुभूति के कारण न केवल स्वयं शिकार से विरक्त होते हैं, बल्कि दूसरों को भी इस (शिकार) से मना कर देते हैं।

रघुवंश में रघुवंशी राजा युद्ध एवं शिकार में प्रवृत्त हुए दिखाये जाते हैं, किन्तु उनके द्वारा बड़े पैमाने पर हिंसा का आश्रय नहीं दिया जाता। इस तरह सौन्दर्य के कवि कालिदास हिंसक पशुओं के वर्णन में भी उन्हें उस रूप में वर्णित नहीं करते।

दूसरी ओर अपनी रचनाओं में बहुसंख्य पक्षियों का वर्णन करते हैं, किन्तु उनमें हिंसक प्राणी गरुड़ एवं गिद्ध आदि हिंसक पक्षियों द्वारा की जानी वाली हिंसा कार्यो का वर्णन नहीं के बराबर है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है, कि इस अध्याय मैं जिन 63 पशुओं एवं 70 पक्षियों का वर्णन है, वे सभी पर्यावरणीय संरक्षण में काफी योगदान करते हैं। यहाँ वे सामान्य लोगों के लिए अज्ञात ऐसे पशु-पक्षियों का उल्लेख करते हैं जो कम संख्या में पाये जाते है अथवा प्राय: अनुपलब्ध हैं। काल के चक्र में प्रकृति के हर अंग की भाँति पशु-पक्षियों की बहुत सारी प्रजातियाँ विलुप्त हो गयी, जिनकी आवश्यकता आज पर्यावरणविद् सोच रहे हैं। इस तरह कालिदास न केवल प्रकृति एवं सौदर्य तथा प्रेम के पूजारी है, अपितु लोकहित की भावना के ओत-प्रोत कवि अपनी रचनाओं में पर्यावरण के प्रति नितांत सजग एवं संवेदनशील दीखते हैं। उनका पशु-पक्षियों के प्रति निरन्तर स्नेह का संदेश मानवता के लिए चिरकाल तक उपयोगी एवं लाभकारी रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थः-

1. ऋतुसंहारम् – 1.13
2. कालिदास ग्रन्थावली –डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी– पृ. – 335
3. कुमारसंभवम् – 7.39
4. रघुवंशम् – 1.16
5. रघुवंशम् – 1.39
6. रघुवंशम् – 1.80
7. कालिदास ग्रन्थावली – डॉ॰ ब्रह्मानन्द त्रिपाठी– पृ॰ – 581
8. कालिदास ग्रन्थावली – डॉ॰ ब्रह्मानन्द त्रिपाठी– पृ॰ – 593
9. कालिदास ग्रन्थावली – डॉ॰ ब्रह्मानन्द त्रिपाठी– पृ॰ – 611
10. अभिज्ञानशाकुन्तलम्– 1.9 के बाद का गद्य
11. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 6.12 के बाद का गद्य
12. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 6.27 के बाद का गद्य